वैदिक व्याख्यान माला - बारहवाँ व्याख्यान

वेद का
श्रीमद्भागवतमें दर्शन

लेखक

पं श्रीपाद दामोदर सातवळेकर

अध्यक्ष- स्वाध्याय-मण्डल, साहित्य वाचस्पति, गीतालङ्कार

मूल्य छः आने

ॐ

वेदका श्रीमद्भागवतमें दर्शन

वेदोंका संरक्षण करने और वेदमंत्रोंमें जो ज्ञान है वह जनतातक पहुंचानेके लिये अनेक उपाय प्राचीन ऋषियोंने किये, उनमेंसे इतिहास पुराणोंका लेखन यह एक महत्त्वपूर्ण कार्य है।

स्त्रीशूद्रद्विजबन्धूनां त्रयी न श्रुतिगोचरा।
कर्मश्रेयसि मूढानां श्रेय एवं भवेदिह।
इति भारतमाख्यानं कृपया मुनिना कृतम् ॥२५॥
भारतव्यपदेशेन ह्याम्नायार्थश्च दर्शितः॥
दृश्यते यत्र धर्मादि स्त्रीशूद्रादिभिरप्युत ॥२९॥
श्री. भागवत १।४

'स्त्री शूद्र और अज्ञानी द्विज इनको श्रुतिका-वेदमंत्रोंका ज्ञान नहीं होता, पर इनका भी कल्याण होना चाहिये, इसलिये व्यासदेवने महाभारतकी रचना की। भारतके मिषसे वेदका ही अर्थ बताया है। इस भारतसे स्त्री शूद्र आदि लोक अपने अपने धर्मोंको यथायोग्य रीतिसे जान सकते हैं।' जो भारतकी स्थिति है, वही अन्यान्य पुराणोंकी भी है, इसलिये कहते हैं कि—

इतिहासपुराणाभ्यां वेदं समुपबृंहयेत्।

इतिहास और पुराणोंसे वेदोंका अर्थ प्रकाशित करना चाहिये। वेदके अर्थको विशद करनेके लिये ही इतिहासों और पुराणोंमें कथाएं तथा अन्यान्य उपदेश लिखे हैं। महाभारतके आख्यान वेदका अर्थ जनताको दर्शानेके लिये ही लिखे हैं। कई यहां कहेंगे कि, इन ग्रंथोंके अन्दर आख्यान और उपाख्यान हैं। इनका वेदोंके साथ क्या संबंध है? उसका स्पष्टीकरण करनेके लिये कहा है—

अजन्माके जन्म

एवं जन्मानि कर्माणि ह्यकर्तुरजनस्य च।
वर्णयन्ति स्म कवयो वेदगुह्यानि हृत्पते।
श्री. भागवत. १।३।३५

'अकर्ता और अजन्मा परमात्मा है, तथापि अलंकारसे उसके भी जन्म और कर्म, जो वेदमें गुप्त तथा गुह्यरीतिसे बताये हैं, कविलोग कथाओंमें प्रकट रूपसे वर्णन करते हैं।' यही वर्णन इतिहासों और पुराणोंमें है। इस तरह वेदके गुह्य वर्णन अलंकार रूपसे इतिहास पुराणोंमें हैं और इन कथाओंके वर्णनोंसे अनेक धर्मों और धर्मानुकूल व्यवहारोंको इन ग्रंथोंमें बताया है। इस कारण कहा जाता है कि इतिहास और पुराणोंसे वेदतत्त्वका उपबृंहण करना चाहिये। इस तरहका वेदोंका जो ज्ञाता होगा उसकी योग्यता कितनी होती है सो देखिये—

सेनापत्यं च राज्यं च दण्डनेतृत्वमेव च।
सर्वलोकाधिपत्यं च वेदशास्त्रविदर्हति॥
श्री. भागवत ४।२२।४५; मनु १२।१००

'सेनापतिका कार्य, राज्यशासनका कार्य, दण्ड देनेका न्यायाधीशका कार्य, सब लोगोंका आधिपत्य ये सब कार्य वेद और शास्त्र जाननेवाला कर सकता है।' वेदशास्त्र जाननेवाला सेनापति बनाया जा सकता है, दण्ड देनेका न्यायाधीशका कार्य करनेके लिये उसकी नियुक्ती की जा सकती है, सब लोगोंके आधिपत्य संबंधी जो भी कार्य होंगे, वे सबके सब वेदशास्त्र जाननेवाला कर सकता है। वेदके ज्ञानका इतना महत्त्व था, वह आज रहा नहीं, इसका कारण इतना ही है कि वेदोंका जैसा अध्ययन होना चाहिये वैसा आजकल नहीं होता है। इसलिये वेदोंका अध्ययन उत्तम हो ऐसा प्रबंध करना चाहिये।

ब्राह्मणेष्वपि वेदज्ञो ह्यर्थज्ञोऽभ्यधिकस्ततः॥
श्री. भागवत ३।२९।३७

'मनुष्योंमें ब्राह्मण श्रेष्ठ, ब्राह्मणोंमें वेदज्ञ श्रेष्ठ और वेदज्ञोंमें वेदमंत्रोंका अर्थ जाननेवाला श्रेष्ठ है' इसका अर्थ वह सब प्रकारके श्रेष्ठ मानवी व्यवहार पवित्रतासे और उत्तमतासे कर सकता है। इसलिये वेदोंका अर्थ उत्तम

रीतिसे जानना चाहिये। यह अर्थज्ञान पुराणमें किस तरह दिया है यह इस लेखमें देखना है। आज इस निबंधमें हम वेदमंत्रोंका अर्थ श्रीमद्भागवतमें किस तरह दिया है वह देखेंगे।

ईश्वरकी व्यापकता

वासुदेवो वसत्येषु सर्वदेहेष्वनन्यदृक्।
येन चेतयते विश्वं विश्वं चेतयते न यम्।
यो जागर्ति शयानेऽस्मिन्नायं तं वेद वेदसः ॥९॥
आत्मावास्यमिदं विश्वं यत्किंचिज्जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्य स्विद्धनम्॥१०॥
श्री. भागवत ८।१।९-

यह अनुवाद ईशउपनिषदका अथवा वा० यजुर्वेदके ४० वें अध्यायके प्रथम मंत्रका है। यह मंत्र देखिये--

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किंच जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्य स्विद्धनम्।
वा० यजु. ४०।१; काण्व यजु. ४०।१; ईश. १

यहां 'ईश' का अर्थ 'आत्मा' किया है। वेदमंत्रके ही पद यहां जैसे के वैसे लिये हैं।

ईशावासं इदं सर्वं।
आत्मावास्यं इदं विश्वं।
वासुदेवो वसत्येषु सर्वदेहेषु।

इस तरह यहां अर्थ किया है। आत्मा सर्व पदार्थोंमें है यह इसका भाव स्पष्ट हुआ। इसीका अधिक स्पष्टीकरण

येन चेतयते विश्वं विश्वं चेतयते न यम्।

'आत्मा इस सब विश्वमें प्रेरणा करता है, परंतु विश्व इस आत्माको प्रेरित नहीं करता।' यह अधिक स्पष्टीकरण है। केन उपनिषद्में ऐसा ही कहा है—

यत् चक्षुषा न पश्यति, येन चक्षूंषि पश्यन्ति।
(इत्यादि०) केन उ. १

'जो आत्मा इस आंखसे नहीं देखता, परंतु जिससे ये हमारे आंख देखते हैं।' यही भाव श्रीमद्भागवतके पूर्वोक्तमंत्रमें अधिक जोडकर यजुर्वेद मंत्रका अधिक सुबोध स्पष्टीकरण किया है। और देखिये—

यस्तु सर्वाणि भूतानि आत्मन्येवानुपश्यति।
सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न विजुगुप्सते॥
वा० य० ४०।६, काण्व० य० ४०।६; ईश ६

इसीका अनुवाद श्रीमद्भागवतमें ऐसा किया है—

आत्मानं सर्वभूतेषु भगवन्तं अवस्थितम्।
अपश्यत् सर्वभूतानि भगवत्यपि चात्मनि॥
श्री भागवत. ३।२४।४६

'सब भूतोंमें आत्मा अथवा भगवान् है और आत्मामें अथवा भगवान्में सब भूत रहे हैं।' इस अनुवादमें आत्माके स्थान में भगवान् शब्द रखकर वेदमंत्रका भाव अधिक स्पष्ट किया है।

विष्णुका वर्णन

ऋग्वेदमें विष्णुका वर्णन इस तरह कहा है—

विष्णोर्नु कं वीर्याणि प्रवोचं यः पार्थिवानि
विममे रजांसि। यो अस्कभायदुत्तरं सधस्थं
विचक्रमाणस्त्रेधोरुगायः॥ ऋ. १।१५४।१

इस मंत्रके ही पद लेकर भागवत लेखक कैसी रचना करता है देखिये—

विष्णोर्नु वीर्यगणनां कतमोऽर्हतीह
यः पार्थिवान्यपि कविर्विममे रजांसि।
चस्कम्भयः स्वरंहसाऽस्खलता त्रिपृष्ठं
यस्मात् त्रिसाम्यसदनादुरुकम्पयानम्॥
श्री. भागवत. २।७।४०

यहां शब्द भी वे ही लिये हैं। 'विष्णुके पराक्रमोंकी गणना कौन कर सकता है, जो पराक्रम उसने पृथिवीपर और अन्तरिक्षमें किये हैं' इस तरह सूक्तके सूक्त श्रीमद्भागवतमें अनुवादके साथ दिये हैं। इस अनुवादको देखकर हम इन सूक्तोंका अनुवाद श्रीमद्भागवतकारके समय कैसा किया जाता था, इसका पता लगा सकते हैं। निम्नलिखित श्लोक भी ऊपरके मंत्रके साथ संबंध रखता है—

उरुक्रमस्य चरितं श्रोतृणामघमोचनम्॥ २८॥
पारं महिम्न उरुविक्रमतो गृणानो
यः पार्थिवानि विममे स रजांसि मर्त्यः॥ २९॥
श्री. भागवत ८।२३

यह श्लोक भी पूर्वोक्त मंत्रका ही अनुवाद है। इस रीतिसे वेदमंत्रोंके शब्दोंके शब्द लेकर भागवतमें अनुवाद किया दीखता है।

दो सुपर्ण

दो सुपर्णोंके विषयमें ऐसा ही अनुवाद है—

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते । तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्त्यन-श्नन्नन्यो अभिचाकशीति ।

ऋ. १।१६४।२०; अथर्व ९।९।२०

इसका अनुवाद देखिये—

सुपर्णावेतौ सदृशौ सखायौ यदृच्छयैतौ कृतनीडौ च वृक्षे । एकस्तयोः खादति पिप्पला-न्नमन्यो निरन्नोऽपि बलेन भूयान् ॥ ६ ॥
आत्मानमन्यं च स वेद विद्वानपिप्पलादो न तु पिप्पलादः । योऽविद्यया युक् स तु नित्यबद्धो विद्यामयो यः स तु नित्यमुक्तः ॥७॥

श्री. भागवत ११।११

'दो उत्तम पंखवाले पक्षी हैं, वे दो समान दीखनेवाले मित्र हैं। इन्होंने अपनी इच्छासे वृक्षपर अपने घरोंने बनाये हैं। इनमेंसे एक मीठा फल खाता है। दूसरा फल नहीं खाता, पर बलसे बहुत बडा है। जो फल खाता नहीं वह अपने आपको पृथक् मानता है, परंतु फल खानेवालेको वह ज्ञान नहीं है। वह अविद्याके कारण बद्ध है, पर जो फल न खानेवाला ज्ञानी है, वह नित्य मुक्त है।' इस रीतिसे अर्थ करनेमें विवरण भी अधिक किया है अर्थका स्पष्टीकरण भी अधिक स्पष्ट समझमें आने योग्य है।

दशशत

इन्द्रो मायाभिः पुरुरूप ईयते।
युक्ता ह्यस्य हरयः शता दश ॥ ऋ. ६।४७।१८

इसमें इन्द्रके रथको दस शत अर्थात् एक सहस्र घोडे जोते हैं ऐसा लिखा है, वही वर्णन भागवतमें है—

ततो रथो मातलिना हरिभिर्दशशतैर्वृतः।
आनीतो द्विपमुत्सृज्य रथमारुरुहे विभुः ॥

श्री भागवत ८।११।१६

'दशशत घोडोंसे घेरा हुआ रथ मातली नामक सारथीने लाया और उसपर इन्द्र चढकर बैठ गया।' 'दश शत हरि' ये पद जैसे वेदमें हैं, वैसे ही भागवतमें हैं। ऐसे पद जैसेके वैसेही रखे हैं, इसलिये कौनसा अनुवाद किस मंत्रका है यह ढूंढना सहज होता है। यहां घोडोंका अर्थ प्रकाश किरण है।

*

प्रभुके भयसे कार्य

प्रभुके भयसे सब अन्य देव अपने अपने कार्य करते हैं ऐसा उपनिषदोंमें कहा है—

भीषाऽस्माद्वातः पवते भीषोदेति सूर्यः।
भीषाऽस्मादग्निश्चेन्द्रश्च मृत्युर्धावति पञ्चमः ॥

तै. उ. २।८; नृ. पू. २।१०

'इसके भयसे वायु बहता है, सूर्य उदय होता है, अग्नि जलता और इन्द्र चमकता है, और पांचवां मृत्यु भी दौडता है।' यही भागवतमें देखिये—

यद्भयाद्वाति वातोऽयं सूर्यस्तपति यद्भयात्।
यद्भयाद्वर्षते देवो भगणो भाति यद्भयात् ॥४०॥
यद्वनस्पतयो भीता लताश्चौषधिभिः सह।
स्वे स्वे काले ऽभिगृह्णन्ति पुष्पाणि च फलानि च ॥४१॥
स्रवन्ति सरितो भीता नोत्सर्पत्युदधिर्यतः।
अग्निरिन्धे सगिरिभिर्भूर्नमज्जति यद्भयात् ॥ ४२ ॥
सोऽनन्तोऽन्तकरः कालोऽनादिरादिकृदव्ययः।
जनं जनेन जनयन् मारयन्मृत्युनान्तकम् ॥ ४५ ॥

श्री. भागवत ३।२९

'इस प्रभुके भयसे वायु बहता है, सूर्य उसीके भयसे तपता है, इन्द्र उसीके भयसे वृष्टी करता है, चन्द्र और नक्षत्र उसीके भयसे प्रकाशते हैं। वनस्पतियां समयपर फूल और फल देती हैं, नदियां उसीके भयसे भयभीत होकर बह रही हैं, समुद्र अपनी मर्यादाका उल्लंघन नहीं करता, अग्नि जलता है, पृथिवी जलमें डूबती नहीं। मृत्यु वध करता है। यह सब उसी प्रभुके भयसे हो रहा है।'

मूल उपनिषद्वचनमें पांच ही देवताओंके नाम थे, परंतु अनुवाद करनेके समय भागवतकारने बारह देवताओंके नाम लिखे हैं। इस अनुवाद पद्धतिसे ऐसा स्पष्ट प्रतीत होता है कि, मूल वेद और उपनिषदमें जो कहा है, उसका अधिक विवरण भी करना चाहिये। यह एक नियमसा यहां दीख रहा है। ऊपर जितने अनुवाद दिये हैं उनमें कई स्थानोंमें इस तरह अर्थ बढाया है और पाठक आगे भी देखेंगे कि जो आशय मूल मंत्रमें संक्षेपसे था उसको अनुवादमें भागवतमें थोडा विशद तथा अधिक स्पष्ट किया है।

वत्स और दूध

अथर्ववेदमें कईयोंके वत्सों तथा उसके दूधका वर्णन है देखिये—

१ तामसुरा उपाह्वयन्त माय एहीति ।
तस्या विरोचनः प्राह्लादिर्वत्स आसीदयस्पात्रं पात्रम् ।
तां द्विमूर्धात्व्यौऽधोक् तां मायामेवाधोक् ॥ १-१ ॥

२ तां पितर उपाह्वयन्त स्वध एहीति ।
तस्या यमो राजा वत्स आसीद्रजतपात्रं पात्रम् ।
तामन्तको मार्त्यवोऽधोक् तां स्वधामेवाधोक् ॥६-७॥

३ तां मनुष्या उपाह्वयन्तेरावत्येहीति ।
तस्या मनुर्वैवस्वतो वत्स आसीत्पृथिवी पात्रम् ।
तां पृथी वैन्योऽधोक् तां कृषिं च
सस्यं चाधोक् ॥ १०-११ ॥

४ तां सप्तऋषय उपाह्वयन्त ब्रह्मण्वत्येहीति ।
तस्याः सोमो राजा वत्स आसीच्छन्दः पात्रम् ।
तां बृहस्पतिराङ्गिरसोऽधोक् तां ब्रह्म च
तपश्चाधोक् ॥ १४-१५ ॥

५ तां देवा उपाह्वयन्तोर्ज एहीति ।
तस्या इन्द्रो वत्स आसीच्चमसः पात्रम् ।
तां देवः सविताऽधोक् तामूर्जामेवाधोक् ॥ १-३ ॥

६ तां गंधर्वाप्सरस उपाह्वयन्त पुण्यगन्ध एहीति ।
तस्याश्चित्ररथः सौर्यवर्चसो वत्स आसीत्
पुष्करपर्णं पात्रम् ।
तां वसुरुचिः सौर्यवर्चसोऽधोक् तां पुण्यमेव
गन्धमधोक् ॥ ६-७ ॥

तामितरजना उपाह्वयन्त तिरोध एहीति ।
तस्याः कुबेरो वैश्रवणो वत्स आसीदामपात्रं पात्रम् ।
तां रजतनाभिः कावेरकोऽधोक् तां
तिरोधामेवाधोक् ॥ १०-११

८ तां सर्पा उपाह्वयन्त विषवत्येहीति ।
तस्यास्तक्षको वैशालेयो वत्स
आसीदलाबुपात्रं पात्रम् ।
तां धृतराष्ट्र ऐरावतोऽधोक् तां विषमेवाधोक् १४-१५

इसका कोष्टक ऐसा बनता है, इसमें किसका कौन वत्स और उसका दूध कौनसा है यह स्पष्ट होता है—

	जाति	वत्सः	दोहनकर्ता	दूध	पात्र
१	असुर	विरोचनः प्रा-ह्लादिः	द्विमूर्धा	माया	अयस्पात्रं
२	पितरः	यमोराजा	अन्तकः, मार्त्यवः	स्वधा	रजतपात्रं
३	मनुष्याः	मनुः वैवस्वतः	पृथी, वन्यः	कृषि, सत्यं	पृथिवी
४	सप्तऋषयः	सोमः राजा	बृहस्पतिः, आंगिरसः	ब्रह्म, तप	छन्दः पात्रं
५	देवाः	इन्द्रः राजा	सविता देवः	ऊर्जा	चमसः पात्रं
६	गंधर्वाप्सरसः	चित्ररथः सौर्यवर्चस	वसुरुचिः, सौर्यवर्चसः	पुण्यः गंध	पुष्करपर्णपात्र
७	इतरजनाः	कुबेरः वैश्रवणः	कावेरकः, रजतनाभिः	तिरोधा	आमपात्रं
८	सर्पाः	तक्षकः, वैशालेयः	धृतराष्ट्रः, ऐरावतः	विषं	अलाबुपात्रं

इस तरह जाती, वत्स, दोहनकर्ता, दूध और पात्रका वर्णन वेदमें है। इसका अनुवाद श्रीमद्भागवतमें देखिये—

वत्सं कृत्वा मनुं पाणावदुहत्सकलौषधीः ॥ १२ ॥
तथा परे च सर्वत्र सारमाददते बुधाः ॥ १३ ॥
ऋषयो दुदुहुर्देवीं इंद्रियेष्वथ सत्तम ।
वत्सं बृहस्पतिं कृत्वा पयश्छन्दोमयं शुचि ॥१४॥
कृत्वा वत्सं सुरगणा इन्द्रं सोममदूदुहन् ।
हिरण्मयेन पात्रेण वीर्यमोजो बलं पयः ॥ १५ ॥
दैतेया दानवा वत्सं प्रह्लादमसुरर्षभम् ।
विधायादूदुहन् क्षीरमयः पात्रे सुरासवम् ॥ १६ ॥
गन्धर्वाप्सरसोऽधुक्षन् पात्रे पद्ममये पयः ।
वत्सं विश्वावसुं कृत्वा गान्धर्वं मधुसौभगम् ॥ १७ ॥
वत्सेन पितरोऽर्यमणा कव्यं क्षीरमधुक्षत ।
आमपात्रे महाभागाः श्रद्धया श्राद्धदेवताः ॥ १८ ॥
प्रकल्प्य वत्सं कपिलं सिद्धाः संकल्पनामयीम् ।
सिद्धिं नभसि विद्यां च ये च विद्याधरादयः ॥१९॥

अन्ये च मायिनो मायां अन्तर्धानादभुतात्मनाम् ।
मयं प्रकल्प्य वत्सं ते दुदुहुर्धारणामयीम् ॥ २० ॥
यक्षरक्षांसि भूतानि पिशाचाः पिशिताशनाः ।
भूतेशवत्सा दुदुहुः कपाले क्षतजासवम् ॥ २१ ॥
तथाऽहयो दन्दशूकाः सर्पा नागाश्च तक्षकम् ।
विधाय वत्सं दुदुहु र्बिलपात्रे विषं पयः ॥ २२ ॥
पशवो यवसं क्षीरं वत्सं कृत्वा च गोवृषम् ।
अरण्यपात्रे चाधुक्षन् मृगेन्द्रेण च दंष्ट्रिणः ॥ २३ ॥
क्रव्यादाः प्राणिनः क्रव्यं दुदुहुः स्वे कलेवरे ।
सुपूर्णवत्सा विहगाश्चरं चाचरमेव च ॥ २४ ॥
वटवत्सा वनस्पतयः पृथग्रसमयं पयः ।
गिरयो हिमवद्वत्सा नाना धातून्स्वसानुषु ॥ २५ ॥
सर्वे स्वमुख्यवत्सेन स्वे स्वे पात्रे पृथक् पयः ।

श्री. भागवत ४।१८

इस श्रीमद्भागवतके वर्णनसे कैसा कोष्टक बनता है सो अब देखिये—

	वत्स	दूध	पात्र
भूपति	मनु	औषधीः	पाणी
ऋषि	बृहस्पति	छन्द	इन्द्रियां
देवाः	इन्द्र	सोम वीर्य, बल, ओजः	हिरण्मयपात्र
दैत्याः दानवाः	प्रल्हाद	सुरा, आसवं	अयःपात्र
गन्धर्वाः अप्सरसः	विश्वावसु	मधुसौभगं	पद्मपत्रे
पितरः	अर्यमा	कव्यंक्षीरं	आमपात्रे
सिद्धाः	कपिलः	सिद्धिविद्या	
मायिनः असुराः	मय	माया	
पिशाचाः	भूतेश	क्षतजासवं	कपालं
सर्पाः नागाः	तक्षकः	विषं	बिलपात्रे
पशवः	गोवृषः	क्षीरं	अरण्यपात्रे
दष्ट्रिनः क्रव्यादाः	मृगेन्द्रः	क्रव्यं	कलेवरे
विहगाः	वत्साः	चरअचर	,,
पक्षिणः			
वनस्पतयः	वटः	रसः	कलेवरे
गिरयः	हिमवान्	धातवः	स्वसानुषु

इस तरह भूमिसे प्रत्येक जातीने अपना वत्स निर्माण किया और अपने लिये जो दूध चाहिये वह भूमिसे निकाला। यह वर्णन जैसा अथर्ववेदमें है वैसा श्रीमद्भागवतमें है। अथर्ववेदसे ही यह लिया है और थोडा बढा दिया है। दैत्योंने सुरा और आसव निर्माण किया और वह वे पीने लगे, ऋषियोंने वेदमंत्रोंका ज्ञानरूपी दूध लिया और वे मानवधर्मका मनन करने लगे, राजाओंने औषधियोंकी वाढ की और अन्न निर्माण किया, देवोंने सोमरसका पान किया और अपना बल बढाया, गन्धर्वोंने मधका पान किया, पितरोंने दूध पिया, कपटी असुरोंने कपट करनेका कार्य किया, पिशाचोंने रक्त पीना अच्छा मान लिया, सिद्धोंने नाना प्रकारकी विद्याओंकी सिद्धि प्राप्त की, सांपोंने विष निर्माण किया और उसका धारण किया, पशुओंने दूध निर्माण किया, मांस खानेवाले पशुओंने मांस खाना शुरू किया, वृक्षोंने नाना प्रकारके रस निर्माण किये, पर्वतोंने नाना प्रकारके धातु उत्पन्न करके धारण किये। इस रीतिसे एक ही पृथ्वीसे अनेकोंने अनेक रस लेनेका प्रारंभ किया।

यहां पाठक देखेंगे कि जो अथर्ववेदमें था वही यहां भागवतके लेखकने लिया और थोडा और भी बढाया है। और 'वेदं समुपबृंहयेत्' वेदके अर्थका उपबृंहण करना चाहिये ऐसा जो कहा था, वह उपबृंहण इस तरह किया गया है, भागवतकारने यह स्वयं करके बताया है। इस रीतिको स्वीकार करके हम भी इस पद्धतिसे वेदमंत्रोंका उपबृंहण कर सकते हैं।

वेद मुख्य विषयको संक्षेपसे कहता है, उसका मनन करके अधिक विस्तार करना चाहिये। यह विस्तार किस पद्धतिसे करना चाहिये वह पद्धति भागवतकारने यहां बतायी है।

द्वादशार चक्र

वेदमें द्वादशार चक्र अर्थात् संवत्सर चक्रका वर्णन इस तरह किया है—

पञ्चपादं पितरं द्वादशाकृतिं दिव आहुः परे
अर्धे पुरीषिणम् ।

अथेमे अन्य उपरे विचक्षणं सप्तचक्रे षडर आहुरर्पितम् ॥ ११ ॥
द्वादशारं नहि तज्जराय वर्वर्ति चक्रं परि द्यामृतस्य।
आ पुत्रा अग्ने मिथुनासो अत्र सप्त शतानि विंशतिश्च तस्थुः ॥ १२ ॥
पञ्चारे चक्रे परिवर्तमाने तस्मिन्नातस्थुर्भुवनानि विश्वा।
तस्य नाक्षस्तप्यते भूरिभारः सनादेव न शीर्यते सनाभिः ॥ १३ ॥

ऋ. १।१६४

पांच पांव, बारह आकृति, सात चक्र और छः आरे जिसमें हैं ऐसा यह एक विशाल चक्र है। यह कालचक्र है। सब भुवन इसी चक्रके आधारसे रहते हैं। इस संवत्सर चक्रका वर्णन इन मंत्रोंमें है। इसीका अनुवाद भागवतमें इस तरह है—

तस्यैकं चक्रं द्वादशारं षण्नेमि त्रिणाभि संवत्सरात्मकं समामनन्ति तस्याक्षो मेरोर्मूर्धनि कृतो मानसोत्तरे कृतेतरभागो यत्र प्रोतं रविरथचक्रं तैलयन्त्रचक्रवत् भ्रमन् मानसोत्तरगिरौ परिभ्रमति ॥

श्री. भागवत ५।२१।१३

'उस रथका एक चक्र बारह आरोंवाला छः नेमीवाला, तीन नाभीयोंसे युक्त है, इसीको संवत्सरचक्र कहते हैं। इस चक्रका अक्ष मेरुपर्वतके ऊपर मानससरोवरके उत्तरभागमें लगा है। तेल निकालनेके यन्त्रके चक्रके समान यह घूमता है।'

इस प्रकार वेही वेदके पद लेकर अपना अनुवाद भागवतकारने लिखा है। इस तरह यह अनुवाद मूल मन्त्रके साथ तुलना करके देखने योग्य है।

शरीर रथ

शरीरका रथरूपसे वर्णन वेदमंत्रमें है—

सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिन इव।
हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु॥

वा. य. ३४।६

'उत्तम सारथी जैसा लगामोंसे रथके घोडोंको ठीक तरह चलाता है वैसा हृदयमें बैठा हुआ मन सब इंद्रियरूपी घोडोंको चलाता है, वह मेरा मन शुभसंकल्प करनेवाला हो।' तथा उपनिषदोंमें—

आत्मानं रथिनं विद्धि शरीरं रथमेव तु।
बुद्धिं तु सारथिं विद्धि मनः प्रग्रहमेव च ॥ ३ ॥
इंद्रियाणि हयानाहुर्विषयांस्तेषु गोचरान्।
आत्मेन्द्रियमनोयुक्तं भोक्तेत्याहुर्मनीषिणः ॥ ४ ॥

कठ ३।३–४

'आत्मा रथी, शरीर रथ, बुद्धि सारथी, मन लगाम, इंद्रियाँ घोडे हैं। ये घोडे विषयोंके खेतमें विचरते हैं। आत्मा-इन्द्रिय-मन मिलकर भोक्ता होता है।'

इसका भागवतमें अनुवाद कैसा किया है सो अब देखिये–

आहुः शरीरं रथमिन्द्रियाणि हयानभीषून्मन इन्द्रियेशम्। वर्त्मानि मात्रा धिषणां च सूतं सत्त्वं बृहद्बन्धुरमीशसृष्टम् ॥ ४१ ॥ अक्षं दश प्राणमधर्मधर्मौ चक्रेऽभिमानं रथिनं च जीवम्। धनुर्हि तस्य प्रणवं पठन्ति शरं तु जीवं परमेव लक्ष्यम् ॥४२॥ रागो द्वेषश्च लोभश्च शोकमोहौ भयं मदः। मानोऽवमानोऽसूया च मायाहिंसा च मत्सरः ॥४३॥ रजः प्रमादः क्षुन्निद्रा शत्रवस्त्वेवमादयः। यावन्नृकायरथमात्मवशोपकल्पं धत्ते गरिष्ठचरणार्चनया निशातम्। ज्ञानासिमच्युतबलो दधदस्तशत्रुः स्वाराज्यतुष्ट उपशान्त इदं विजह्यात् ॥ ४७ ॥

श्री. भागवत ७।१५

'शरीर रथ है, इन्द्रियां घोडे हैं, लगाम मन हैं यह मन इंद्रियोंको चलाता है, इन घोडोंका मार्ग प्राकृतिक भोगोंका मार्ग है, बुद्धि सारथी है, दश प्राणोंका अक्ष बनाया है, अधर्म और धर्म ये चक्र हैं. अभिमानी जीव इस रथमें बैठनेवाला स्वामी है, इसके हाथमें ओंकारका धनुष्य है, बाण ही जीव है और परब्रह्म लक्ष्य है जिसपर जीवरूपी बाणने जाकर गिरना है। भोग प्रेम, द्वेष, लोभ, शोक, मोह, भय, गर्व, मान, अपमान, ईर्ष्या, कपट, हिंसा, मत्सर, भोगवृत्ती बढानेवाला रजोगुण; प्रमाद, क्षुधा, निद्रा, ये सब इसके शत्रु हैं जो इस पर हमला

करना चाहते हैं। जबतक इस शरीररूपी रथको अपने आधीन वह रखता है, श्रेष्ठ गुरुजनोंकी उपासना करता है, ज्ञानरूपी शस्त्र धारण करता है, तबतक बलवान होता है, शत्रुको परास्त करता है, अपना स्वराज्य प्राप्त करता है, उस स्वराज्यसे सन्तुष्ट होता है और आनन्दित होता है।

जो ऐसा नहीं करता है उसका नाश होता है। यह अनुवाद और भी है परंतु यहां इतना ही दिया है। मंत्रके भावको बढानेकी रीति यहां इस रीतिसे अच्छी तरह ध्यानमें आ जाती है। 'इतिहास-पुराणाभ्यां वेदं समुपबृंहयेत्' इतिहास और पुराणोंसे वेदोंके अर्थका अधिक विस्तार करके बताना चाहिये। इस कथनका यह अर्थ है। इस तरह वेदमंत्रोंका रहस्य अच्छी तरह खुल जाता है। और वेदका गौरव भी बढता है।

सहस्रशीर्षा पुरुष

विश्वरूपी परमेश्वरका वर्णन वेदमें अनेक स्थानोंपर है। परंतु पुरुष सूक्तमें वह विशेष स्पष्ट है। वह यहां प्रथम देखिये—

सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ॥ १ ॥
पुरुष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भव्यम् ॥ २ ॥
त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः पादोऽस्येहाभवत्पुनः ॥ ४ ॥
ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत ॥ १२ ॥
चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्यो अजायत।
मुखादिन्द्रश्चाग्निश्च प्राणाद्वायुरजायत ॥ १३ ॥
नाभ्या आसीदन्तरिक्षं शीर्ष्णो द्यौः समवर्तत।
पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकानकल्पयन् ॥१४

ऋ. १०।९०

'हजारों मुखोंवाला पुरुष अर्थात् परमेश्वर है। उसको हजारों आंख हैं, हजारों पांव हैं। जो कुछ भूतकालमें हुआ, जो भविष्यमें होगा और जो वर्तमान समयमें है, वह सब पुरुष ही है अर्थात् वह ईश्वर ही है। इसके तीन भाग ऊपर हैं और एक भागसे ही यह विश्व वारंवार बनता रहता है। इसका मुख ब्राह्मण है, बाहू क्षत्रिय है, वैश्य पेट या जांघें हैं और शूद्र पांव हैं। चन्द्रमा मन है, आंख सूर्य है, मुख इन्द्र और अग्नि है, प्राणवायु है। नाभी अन्तरिक्ष है, सिर द्युलोक है, पांव भूमि है और अन्य अवयवों की कल्पना अन्य लोकोंके स्थानमें की है।'

संपूर्ण विश्वमें जो प्राणी हैं उनके सिर बाहू पेट और पांव इस परमेश्वरके सिर, बाहू, पेट और पांव हैं। संपूर्ण प्राणी और सूर्यादि लोक इसके शरीरके अंग प्रत्यंग हैं। इसका वर्णन वेदमें और भी है वह अब देखिये—

सहस्रबाहुः पुरुषः। अथर्व १९।६

हजारों बाहुओंवाला पुरुष है। अर्थात् सब प्राणियोंके जो बाहु हैं वे इस ईश्वरके बाहु हैं। और भी देखिये—

यस्मिन्भूमिरन्तरिक्षं द्यौर्यस्मिन्नध्याहिता।
यत्राग्निश्चन्द्रमाः सूर्यो वातस्तिष्ठन्त्यार्पिताः ॥ १२ ॥
यस्य त्रयस्त्रिंशद्देवा अंगे सर्वे समाहिताः ॥ १३ ॥
समुद्रो यस्य नाड्यः पुरुषेऽधि समाहिताः ॥ १५ ॥
यस्य शिरो वैश्वानरश्चक्षुरंगिरसोऽभवन्।
अंगानि यस्य यातवः स्कंभं तं ब्रूहि ॥ १८ ॥
यत्रादित्याश्च रुद्राश्च वसवश्च समाहिताः।
भूतं च यत्र भव्यं च सर्वे लोकाः प्रतिष्ठिताः ॥२२॥
यस्य त्रयस्त्रिंशद्देवा अंगे गात्रा विभेजिरे।
तान् वै त्रयस्त्रिंशद्देवानेके ब्रह्मविदो विदुः ॥ २७ ॥
यस्य भूमिः प्रमान्तरिक्षमुतोदरम्।
दिवं यश्चक्रे मूर्धानं तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः॥३२॥
यस्य सूर्यश्चक्षुश्चन्द्रमाश्च पुनर्णवः।
अग्निं यश्चक्र आस्यं तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः ॥३३॥
यस्य वातः प्राणापानौ चक्षुरंगिरसोऽभवन्।
दिशो यश्चक्रे प्रज्ञानीस्तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः॥३४॥

अथर्व. १०।७

जिस परमेश्वरके विश्व शरीरमें भूमि, अन्तरिक्ष और द्युलोक रहे हैं। जिसमें अग्नि, चन्द्रमा और सूर्य तथा वायु रखे गये हैं, जिस परमेश्वरके विश्वरूप देहमें सब तैंतीस देव हैं, समुद्र तथा नदियां जिसके शरीरकी नाडियां हैं, जिस परमेश्वरका सिर वैश्वानर अग्नि हैं, आंख अंगिरस है और शरीरके विभाग सब प्राणी बने हैं वह सर्वाधार ईश्वर है। जिस परमेश्वरके विश्वदेहमें द्वादश आदित्य, ग्यारह रुद्र और अष्ट वसु रहे हैं। भूतकालमें जो हो चुका था, भविष्यमें जो होगा, और वर्तमानकालमें जो है, वह सब जिसमें

रहा है, जिसके शरीरके अंगोंमें तैंतीस देव विभक्त होकर रहे हैं, उन तैंतीस देवोंको अकेले ब्रह्मज्ञानी जानते हैं। भूमि जिसका पांवका प्रमाण है, अन्तरिक्ष जिस ईश्वरका पेट है, द्युलोकको जिसने अपना सिर बनाया है उस श्रेष्ठ ब्रह्मके लिये मेरा प्रणाम है। जिस ईश्वरके देहका एक आंख सूर्य है, दूसरा आंख चन्द्रमा है, अग्नि जिसका मुख है उस श्रेष्ठ ब्रह्मको मेरा प्रणाम है। जिसके शरीरमें वायु प्राण बना है, आंख अंगिरस अग्नि बना है, दिशाएं जिसके कान है उस श्रेष्ठ ब्रह्मके लिये मेरा प्रणाम है।

इन अथर्ववेदके मंत्रोंमें ज्येष्ठ ब्रह्मके विश्वदेहका वर्णन है। इसका देह इन सब तैंतीस देवोंका ही बना है। इस ब्रह्मके शरीरमें पृथिवी पांव है, अन्तरिक्ष पेट है, नस नाडियां नदियां हैं, मुख अग्नि है, सूर्यचन्द्र आंख है, जल जिव्हा है, दिशाएं कान है, वायु प्राण है, द्यु सिर हैं और अन्य देव अन्य अवयवोंमें रहे हैं। ब्रह्मके विश्व शरीरका यह वर्णन है। विश्वरूपी पुरिमें रहता है इसलिये इसको विश्वरूप प्रभु कहते हैं। यह तो वेदमंत्रोंमें विराट् पुरुषका वर्णन है। इसी विराट् पुरुषका वर्णन अब श्रीमद्भागवतमें कैसा किया है सो देखिये—

यस्यावयवसंस्थानैः कल्पितो लोकविस्तरः।
तद्वै भगवतो रूपं विशुद्धं सत्त्वमूर्जितम् ॥ ३ ॥
पश्यन्त्यदो रूपमदभ्रचक्षुषा
सहस्रपादोरुभुजाननाद्भुतम्।
सहस्रमूर्धश्रवणाक्षिनासिकं
सहस्रमौल्यम्बरकुण्डलोल्लसत् ॥ ४ ॥

श्री. भागवत १।३

'परमेश्वरके स्थूल देहके नाना अवयवोंमें अनेक लोकोंका विस्तार है ऐसा कवि कहते हैं। यह भगवानका विश्वरूप विशुद्ध और सात्त्विकरूप है। इस भगवानका यह रूप निश्चल दृष्टीसे लोग देखते हैं, इसमें सहस्रों सिर, कान, आंख, नासिकाएं आदि अवयव हैं, इसमें सहस्रों मुकुट, वस्त्र, और कुण्डल चमक रहे हैं।'

सहस्रों सिरोंपर सहस्रों मुकुट होंगे और सहस्रों देहोंपर हजारों वस्त्र अवश्य होंगे ही। सहस्रों कानोंमें सहस्रों कुण्डल भी अवश्य होंगे। अर्थात् हजारों मानवोंका समुदाय ही इस भगवानके देहमें है, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र इस भगवानके सिर बाहू उदर और हाथ हैं, इसलिये मुकुट वस्त्र आदि जो इन वर्णोंके लोगोंने पहने हैं, वे भगवानने ही पहने हैं। इस तरह यह विश्वरूपी भगवान का वर्णन है। और देखिये—

विशेषस्तस्य देहोऽयं स्थविष्ठश्च स्थवीयसाम्।
अत्रेदं दृश्यते विश्वं भूतंभव्यं भवच्च यत् ॥२४॥
आण्डकोशे शरीरेऽस्मिन् सप्तावरणसंयुते।
वैराजः पुरुषो योऽसौ भगवान् धारणाश्रयः ॥ २५ ॥ पातालमेतस्य हि पादमूलं
पठन्ति पार्ष्णिप्रपदे रसातलम्। महातलं
विश्वसृजोऽथ गुल्फौ तलातलं वै पुरुषस्य
जंघे ॥ २६ ॥ द्वेजानुनी सुतलं विश्वभूतेरूरुद्वयं
वितलं चातलं च। महीतलं तज्जघनं महीपते
नभस्तलं नाभिसरो गृणन्ति ॥ २७ ॥ उरस्थलं
ज्योतिरनीकमस्य ग्रीवा महर्वदनं वै जनोऽस्य।
ततो रसाटं विदुरादिपुंसः सत्यं तु शीर्षाणि
सहस्रशीर्ष्णः ॥ २८ ॥ इन्द्रादयो बाहव आहुरुस्राः कर्णौ दिशः श्रोत्रममुष्य शब्दः।
नासत्यदस्रौ परमस्य नासे घ्राणोऽस्य गन्धो
मुखमग्निरिद्धः ॥२९॥ द्यौरक्षिणी चक्षुरभूत्पतङ्गः
पक्ष्माणि विष्णोरहनी उभे च। तद्भ्रूविजृम्भः
परमेष्ठिविष्ण्यमापोऽस्य तालू रस एव
जिह्वा ॥ ३० ॥ कस्तस्य मेढ्रं वृषणौ च मित्रौ
कुक्षिः समुद्रा गिरयोऽस्थिसंघाः ॥ ३१ ॥
नद्योऽस्य नाड्योऽथ तनूरुहाणि महीरुहा
विश्वतनोर्नृपेन्द्र। अव्यक्तमाहुर्हृदयं मनश्च
सचन्द्रमाः सर्वविकारकोशः ॥ ३४ ॥ ब्रह्माननं
क्षत्रभुजो महात्मा विडूरुरंघ्रिश्रितकृष्णवर्णः।

श्री भागवत २।१

'विशेष करके भगवानका स्थूल शरीर यह विश्व ही है। इसमें भूत भविष्य वर्तमानमें जो है वह सब आ जाता है। इस भगवानके शरीरमें सात आवरण हैं। पाताल इसके पांव हैं, रसातल पार्ष्णि हैं, महातल गुल्फ हैं, तलातल पिंडरियां है सुतल दोनों जांघें हैं, वितल और अतल दोनों घुटने हैं, महीतल जघन है, नभस्तल नाभी है, छाती ज्योति मंडल है, महर्लोक गला है, जनोलोक मुख है, ललाट तपोलोक है और सत्य लोक सिर हैं। इन्द्रादि क्षत्र देव

परमात्माके बाहु हैं, दिशाएं कान हैं, श्रवण शब्द हैं, अश्विनीकुमार नासाछिद्र हैं, गन्ध घ्राण है, मुख अग्नि है, द्युलोक आंख है, सूर्य नेत्र है, दिनरात्र फलकें हैं। जल तालू है, जिह्वा रस है। ब्रह्मा शिश्न है, मित्रावरुण अण्ड हैं, कुक्षि समुद्र है, पर्वत हड्डियां है, नदियां नाडियां हैं, बाल वनस्पतियां हैं, अव्यक्त प्रकृति हृदय है, मन चन्द्रमा है, ब्राह्मण मुख है, क्षत्रिय बाहु है, वैश्य ऊरु है और शूद्र पांव है ऐसा यह विश्व इस विश्वव्यापी भगवानका शरीर है।'

इसी तरह और भी देखिये—

सहस्रोर्वंघ्रिबाह्वक्षः सहस्राननशीर्षवान् ॥ ३५ ॥
यस्येहावयवैर्लोकान्कल्पयन्ति मनीषिणः ।
कट्यादिभिरधः सप्त सप्तोर्ध्वं जघनादिभिः ॥ ३६ ॥
पुरुषस्य मुखं ब्रह्म क्षत्रमेतस्य बाहवः ।
ऊर्वोर्वैश्यो भगवतः पद्भ्यां शूद्रोऽभ्यजायत ॥ ३७ ॥
भूर्लोकः कल्पितः पद्भ्यां भुवर्लोकोऽस्य नाभितः ।
स्वर्लोकः कल्पितो मूर्ध्ना इति वा लोककल्पना ॥४२
श्री भागवत २।५

'सहस्रों उरु, पांव, नेत्र, मुख और सिर जिस भगवान के हैं। जिसके अवयवोंमें नाना लोकोंकी कल्पना की है। कटीसे नीचे सात लोक और ऊपर सात लोक हैं। इस भगवान्‌के मुख बाहु ऊरु और पांव क्रमसे ब्राह्मण, क्षत्रिय वैश्य शूद्र हैं। भूलोक पांव, भुवर्लोक नाभी और स्वर्गलोग सिर है इस तरह भी परमेश्वरके शरीरमें सब लोकोंकी कल्पना की है।

और भी इसी विराट् पुरुषका वर्णन देखिये—

सुरासुरनरा नागाः खगा मृगसरीसृपाः ।
गन्धर्वाप्सरसो यक्षा रक्षोभूतगणोरगाः ॥ १३ ॥
पशवः पितरः सिद्धा विद्याध्राश्चारणा द्रुमाः ।
अन्ये च विविधा जीवा जलस्थलनभौकसः ॥ १४ ॥
ग्रहर्क्षकेतवस्तारास्तडित्स्तनयित्नवः ।
सर्वं पुरुष एवेदं भूतं भव्यं भवच्च यत् ॥ १५ ॥
तेनेदमावृतं विश्वं वितस्तिमधितिष्ठति ॥ १६ ॥
एवं विराजं प्रतपंस्तपस्यन्तर्बहिः पुमान् ॥
सोऽमृतत्वस्याभयस्येशो मर्त्यमन्नं यदत्यगात् ॥१७॥
श्री भागवत २।६

'सुर, असुर, नाग, पक्षी, मृग, जलजन्तु, गन्धर्व, अप्सरा, यक्ष, राक्षस, भूतगण, उरग, (सर्प) पशु, पितर, सिद्ध, विद्याधर, चारण, वृक्ष, जो अन्यान्य जीव हैं, जो जलस्थल और आकाशमें रहते हैं, जो ग्रह, नक्षत्र, तारागण हैं, बिजलियां और प्रकाशवाले पदार्थ हैं, यह सब जो तीनों कालोंमें रहता है वह सब (पुरुषः एव) पुरुष अर्थात् परमेश्वर ही है। यह सब विश्व उसके वितस्तिपरिमित स्थानमें है ऐसा समझो। यह ईश्वर सर्वत्र व्यापकर रहा है। यह अन्दर और बाहर सर्वत्र प्रकाशता है। यह अमृतत्वका और अभयका स्वामी है।'

इसमें पुरुषसूक्तके ही मंत्रभाग जैसेके वैसे लिये हैं। पुरुष सूक्तमें ये मंत्र भाग हैं—

१ पुरुष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भव्यं ।
२ अमृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति । (ऋ. य.)
अमृतत्वस्येश्वरो यदन्नेनाभवत्सह । (अथ.)
३ अत्यतिष्ठद्दशांगुलम् ।

ये मंत्र भाग थोडे हेरफेरसे इन श्लोकोंमें हैं। तथा—

४ गावो ह जज्ञिरे तस्मात्तस्माज्जाता अजावयः ।

गौवें घोडें और भेड, बकरियां उस ईश्वरसे बनी अथवा इन रूपोंको ईश्वरने धारण किया ऐसा कहा है, वही अधिक नामोंको लिखकर भागवतकारने अधिक स्पष्ट किया है। ये सब रूप ईश्वरके हैं अर्थात् यह विश्वरूप ईश्वरका रूप है। और देखिये—

एवं सहस्रवदनांघ्रिशिरः करोरुनासास्यकर्ण-
नयनाभरणायुधाद्भुतम् । मायामयं सदुपल-
क्षितसंनिवेशं दृष्ट्वा महापुरुषमाप मुदं विरिञ्चः॥
श्री भागवत ७।९।३६

'सहस्रों मुख, पांव, सिर, हात, जंघा, नाक, कान, नेत्र जिसके हैं, उस महापुरुष परमेश्वरका मायामय शरीर देखकर ब्रह्मदेवको बडा आनंद हुआ।' अर्थात् परमेश्वरका यह विश्वरूप शरीर है और उसमें हजारों प्राणियोंके मुख आदि अवयव हजारों हैं यह परमेश्वरका प्रत्यक्ष दर्शन है।

पादो महीयं स्वकृतैव यस्य चतुर्विधो यत्रहि
भूतसर्गः । स वै महापुरुष आत्मतन्त्रः प्रसी-
दतां ब्रह्ममहाविभूतिः ॥ ३१ ॥ अम्भस्तु यद्रेत

उदारवीर्या सिध्यन्ति जीवन्त्युत वर्धमानाः ॥
लोकास्त्रयोऽथाखिललोकपालाः प्रसादितां ब्रह्ममहाविभूतिः ॥ ३३ ॥ सोमं मनो यस्य समामनन्ति दिवौकसां वै बलमन्ध आयुः॥३४
अग्निर्मुखं यस्य तु जातवेदा जातः क्रियाकाण्ड-निमित्तजन्म ॥३५॥ यच्चक्षुरासीत्तरणिर्देवयानं त्रयीमयो ब्रह्मण एष धिष्ण्यम् ॥ ३६ ॥
प्राणादभूद्यस्य चराचराणां प्राणः सहो बलमोजश्च वायुः ॥ ३७ ॥ श्रोत्राद्दिशो यस्य हृदश्च खानि प्रजज्ञिरे खं पुरुषस्य नाभ्याः ॥३८
विप्रो मुखं ब्रह्म च यस्य गुह्यं राजन्य आसीत् भुजयोर्बलं च ॥ ऊर्वोर्विडोजोंऽघ्रिखेद शूद्रो प्रसीदतां नः स महाविभूतिः ॥ ४१ ॥

श्री. भागवत ८।५

' परमेश्वरके पांव पृथिवी हैं, जल रेत है, चन्द्र मन है, अग्नि मुख है, आंख सूर्य है, प्राण वायु है, कान दिशा हैं ब्राह्मण मुख हैं, क्षात्रेय बाहू हैं, ऊरु वैश्य और पांव शूद्र हैं। ऐसा यह महाविभूति परमेश्वर विश्वरूपी है। ' इसको ऐसा समझकर इसकी उपासना इसे विश्वरूप मानकर करनी चाहिये। अर्थात् विश्वमें जो वस्तु अपने सामने आ जाय उसे परमेश्वरका देहांश मानकर उसके साथ सद्व्यवहार करना चाहिये। तथा और देखिये—

अग्निर्मुखं तेऽवनिरंघ्रिरीक्षणं सूर्यो, नभो नाभिरथो दिशः श्रुतिः। द्यौः सुरेन्द्रास्तव बाहवोऽर्णवाः कुक्षिर्मरुत्प्राणबलं प्रकल्पितम् ॥ १३ ॥
रोमाणि वृक्षौषधयः शिरोरुहा मेघाः परस्यास्थिनखानि तेऽद्रयः। निमेषणं राज्यहनी प्रजापतिर्मेढ्रस्तु वृष्टिस्तव वीर्यमिष्यते ॥१४॥
त्वय्यव्ययात्मन् पुरुषे प्रकल्पिता लोकाः सपाला बहुजीव संकुलाः। यथा जले संजिहते जलौकसोऽप्युदुम्बरे वा मशका मनोमये ॥१५॥

श्री भागवत १०।४०

' भगवान्का मुख अग्नि है, भूमि पांव है, नेत्र सूर्य है, अन्तरिक्ष नाभी है, कान दिशा है, द्युलोक सिर है, इन्द्रादि देव बाहु हैं, समुद्र कुक्षि है, वायु प्राण है, बाल औषधि वनस्पतियां हैं, हड्डियां पर्वत हैं, आंखोंकी पलकें दिनरात हैं, प्रजापति शिश्न है, जलवृष्टि वीर्य है। इस तरह ईश्वरके अव्यय आत्मामें इन लोकोंकी कल्पना की है। सब जीव ईश्वरके विश्व शरीरमें ऐसे हैं कि जैसे जलमें जलकृमि और उदुम्बरमें मक्खियां होती हैं। '

इस तरह भगवान्के विश्वरूप देहका वर्णन जैसा वेदमें किया है वैसा ही श्रीमद्भागवतमें किया है। और भी देखिये—

हरिका शरीर

खं वायुमग्निं सलिलं महीं च ज्योतींषि सत्त्वानि दिशो द्रुमादीन्। सरित्समुद्रांश्च हरेः शरीरं यत्किं च भूतं प्रणमेदनन्यः ॥

श्री भा. ११।२।४१

' आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथिवी, सूर्यादि तेजोगोल, दिशा, वृक्ष, नदियां, समुद्र यह सब ईश्वरका शरीर (हरेः शरीरं) है, इसलिये जिस वस्तुको देखा जाय, वह अपनेसे पृथक् नहीं (अन्-अन्यः) ऐसा समझकर, उसको परमेश्वरका शरीर मानकर प्रणाम करना योग्य है। ' अर्थात् जो जो वस्तु इस विश्वमें है वह सब परमेश्वरका देह है ऐसा समझकर उसका आदर करना चाहिये। ' विश्वरूप ईश्वर ' है इसका यही तात्पर्य है। इसको वैसा ही जानना चाहिये। प्रत्येक वस्तु इस तरह परमेश्वरका स्वरूप है, इस कारण प्रतिवस्तुका सुयोग्य आदर करने योग्य हैं। श्रीमद्भगवद्गीतामें भी यही कहा है—

भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेव च।
अहंकार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा ॥ ४ ॥
अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृतिं विद्धि मे पराम्।
जीवभूतां महाबाहो ययेदं धार्यते जगत् ॥ ५ ॥

भ. गीता ७

' पृथिवी, आप, तेज, वायु, आकाश, मन, बुद्धि, अहंकार और जीव यह नौ प्रकारकी मेरी शरीर प्रकृति है। ' अर्थात् यह पंचभूतात्मक सब विश्व परमेश्वरका शरीर है ऐसा मानना योग्य है। गीताका यही मन्तव्य है जो वेदानुकूल है। श्रीमद्भागवतमें कहा है—

सर्वभूतात्माविग्रहम्। भजस्व।

श्री भागवत ४।१२।५

"सब भूत-सब पंचमहाभूतोंसे जो विश्व बना है वही जिसका शरीर है। उसकी भक्ति कर।" यहां 'विग्रह' का अर्थ 'शरीर' है। इसी विराट् पुरुषका वर्णन श्रीमद्भागवत में इस प्रकार लिखा है—

वाग्विर्वाचा मुखं भेजे। घ्राणेन नासिके वायुः।
अक्षिणी चक्षुरादित्यः। श्रोत्रेण कर्णौ च दिशः।
त्वचं रोमभिरोषध्यः। रेतसा शिश्नमापस्तु।
गुदं मृत्युरपानेन। हस्ताविन्द्रो बलेनैव।
विष्णुर्गत्यैव चरणौ। नाडीर्नद्यो लोहितेन।
क्षुत्तृड्भ्यामुदरं सिन्धुः। हृदयं मनसा चन्द्रः।
बुद्ध्या ब्रह्मापि हृदयं। रुद्रोऽभिमत्या हृदयं।
चित्तेन हृदयं चैत्यः क्षेत्रज्ञः प्राविशत्तदा।
विराट् तदैव पुरुषः सलिलादुदातिष्ठत॥

श्री. भागवत ३।२६।६३-७०

इन श्लोकोंमें जो देवता जहां रहे ऐसा कहा है उससे ऐसा कोष्टक बनता है—

अग्नि	वाणीके रूपसे	मुखमें प्रविष्ट हुआ।		
वायु	घ्राण ,,	नासिका ,,		
आदित्य	चक्षु ,,	आंखों ,,		
दिशा	श्रोत्र ,,	कर्ण ,,		
ओषधियां	रोम ,,	त्वचा ,,		
आपः	रेतः ,,	शिश्न ,,		
मृत्युः	अपान ,,	गुदा ,,		
इन्द्रः	बल ,,	हाथों ,,		
विष्णु	गति ,,	चरण ,,		
नदियां	लोहित ,,	नाडियों ,,		
समुद्र	क्षुधातृषा,,	उदर ,,		
चन्द्र	मन ,,	हृदय ,,		
ब्रह्मा	बुद्धि ,,	,, ,,		
रुद्र	अभिमान,,	,, ,,		
चैत्यः	चित्त ,,	,, ,,		

यहां १५ देवताएं इस तरह इन स्थानोंमें शरीरमें रहने लगी ऐसा कहा है। वास्तवमें ३३ देवताओंका निवास शरीरमें हुआ है और ३४ वां आत्मा है। पर यहां १५ ही देवताओंका निर्देश है। इसके विपरीत वर्णन भी है वह अब देखिये—

निरभिद्यतास्य प्रथमं मुखं वाणी ततोऽभवत्॥
वाण्या वह्निरथो नासे प्राणोऽतो घ्राण एतयोः॥५४॥
प्राणाद्वायुरभिद्येतामक्षिणी चक्षुरेतयोः।
तस्मात्सूर्यो व्यभिद्येतां कर्णौ श्रोत्रं ततो दिशः॥५५॥
निर्बिभेद विराजस्त्वग्रोमश्मश्वादयस्ततः।
तत ओषधयश्चासन् शिश्नं निर्बिभिदे ततः॥५६॥
रेतस्तस्मादाप आसन् निरभिद्यत वै गुदम्।
गुदादपानोऽपानाच्च मृत्युर्लोकभयंकरः॥५७॥
हस्तौ च निरभिद्येतां बलं ताभ्यां ततः स्वराट्।
पादौ च निरभिद्येतां गतिस्ताभ्यां ततो हरिः॥५८॥
नाड्योऽस्य निरभिद्यन्त ताभ्यो लोहितमाभृतम्।
नद्यस्ततः समभवन्नुदरं निरभिद्यत॥५९॥
क्षुत्पिपासे ततः स्यातां समुद्रस्त्वेतयोरभूत।
अथास्य हृदयं भिन्नं हृदयान्मन उत्थितम्॥६०॥
मनसश्चन्द्रमा जातो बुद्धिर्बुद्धेर्गिरां पतिः।
अहंकारस्ततो रुद्रश्चित्तं चैत्यस्ततोऽभवत्॥६१॥

श्री भागवत ३।२६

इन श्लोकोंमें जो कहा है उससे जो कोष्टक बनता है वह ऐसा है—

मुख उत्पन्न हुआ, उससे वाणी और उससे अग्नि हुआ

नाक	,,	,,	प्राण	,,	वायु
नेत्र	,,	,,	चक्षु	,,	सूर्य
कान	,,	,,	श्रोत्र	,,	दिशा
त्वचा	,,	,,	रोम	,,	औषधियाँ
शिश्न	,,	,,	रेत	,,	आपः
गुदा	,,	,,	अपान	,,	मृत्यु
हाथ	,,	,,	बल	,,	इन्द्र (स्वराट्)
पांव	,,	,,	गति	,,	हरि (विष्णु)
नाडियां	,,	,,	रुधिर	,,	नदियाँ
उदर	,,	,,	क्षुधाप्यास	,,	समुद्र
हृदय	,,	,,	मन	,,	चन्द्रमाः
बुद्धिः	,,	,,	ज्ञान	,,	बृहस्पतिः
अहंकार	,,	,,	चित्त	,,	रुद्र

इस तरह वही चित्रपट यहां उलटा रखा है। ऐतरेय उपनिषद्में यही कहा है, पर इतना ही फरक है कि

ऐतरेयमें देवताएं थोडी हैं और यहां अधिक हैं। देखिये ऐतरेय का वचन ऐसा है—

मुखं निरभिद्यत, मुखाद्वाक्, वाचो अग्निः, नासिके निरभिद्येतां, नासिकाभ्यां प्राणः, प्राणाद्वायुः, अक्षिणी निरभिद्येतां, अक्षिभ्यां चक्षुः, चक्षुष आदित्यः, कर्णौ निरभिद्येतां, कर्णाभ्यां श्रोत्रं, श्रोत्राद्दिशः, त्वङ् निरभिद्यत, त्वचो लोमानि, लोमभ्य ओषधिवनस्पतयः, हृदयं निरभिद्यत, हृदयान्मनः, मनसश्चन्द्रमाः, नाभिर्निरभिद्यत, नाभ्या अपानो, ऽपाना-न्मृत्युः, शिश्नं निरभिद्यत, शिश्नाद्रेतः, रेतस आपः ॥ ऐ. उ. १।१

यहां विराट् पुरुषके मुख, नासिका, नेत्र, कर्ण, त्वचा, हृदय, नाभि और शिश्नसे क्रमपूर्वक वाणी, प्राण, चक्षु, श्रोत्र, लोम, मन, अपान और रेत हुए और इनसे क्रमशः अग्नि, वायु, सूर्य, दिशा, वनस्पतियाँ, चन्द्रमा, मृत्यु और आप् उत्पन्न हुआ ऐसा कहा है। यहां आठ देवताओंका वर्णन है। इसके अंश पुरुषके शरीरमें कैसे जाकर वसे इसका वर्णन अब देखिये—

अग्निर्वाग्भूत्वा मुखं प्राविशत्,
वायुः प्राणो भूत्वा नासिके प्राविशत्,
आदित्यश्चक्षुर्भूत्वा अक्षिणी प्राविशत्,
दिशः श्रोत्रं भूत्वा कर्णौ प्राविशन्,
ओषधिवनस्पतयो लोमानि भूत्वा त्वचं प्राविशन्,
चन्द्रमा मनो भूत्वा हृदयं प्राविशत्,
मृत्युरपानो भूत्वा नाभिं प्राविशत्,
आपो रेतो भूत्वा शिस्नं प्राविशन्।

ऐ. उ. १।२

अग्नि वाणी बनकर मुखमें प्रविष्ट हुआ, वायु प्राण बन कर नासिकामें प्रविष्ट हुआ, सूर्य आंख बनकर नेत्रमें प्रविष्ट हुआ, दिशा श्रोत्र बनकर कानमें प्रविष्ट हुई, ओषधि वनस्पतियां बाल बनकर त्वचामें प्रविष्ट हुई, चन्द्रमा मन बनकर हृदयमें प्रविष्ट हुआ, मृत्यु अपान बनकर नाभिमें प्रविष्ट हुआ, आप रेत बनकर शिस्नमें प्रविष्ट हुआ। इस तरह विश्वमें जो देवताएं हैं वे सब देवताएं अंशरूपसे इस शरीरमें प्रविष्ट हुई हैं और इन देवताओंके अंशोंसे यह शरीर बना है।

यह जो वर्णन इस ऐतरेय उपनिषद्में है वही ऊपरके श्रीमद्भागवतके श्लोकोंमें है, केवल और अधिक देवताओंके नाम वहां अधिक लिखे हैं। यही वर्णन वेदमंत्रमें ऐसा ही है देखिये—

दश साकमजायन्त देवा देवेभ्यः पुरा ॥ ३ ॥
प्राणापानौ चक्षुः श्रोत्रं अक्षितिश्च क्षितिश्च या।
व्यानोदानौ वाङ् मनः ते वा आकूतिमावहन् ॥४॥
ये त आसन् दश जाता देवा देवेभ्यः पुरा।
पुत्रेभ्यो लोकं दत्त्वा कस्मिंस्ते लोकमासते ॥ १० ॥

अथर्व ११।८

दस देवोंसे पूर्व समयमें दस देव उत्पन्न हुए। प्राण, अपान, चक्षु, श्रोत्र, अक्षिति, क्षिति, व्यान, उदान, वाक्, मन ये शरीरमें कार्य करनेवाले देवोंसे उत्पन्न हुए इंद्रिय गण हैं, अवयव हैं। ये बाह्य वायु सूर्य आदि देवोंके अंश अथवा पुत्र हैं। विश्वमें रहनेवाले बडे दस देवोंने शरीरमें रहनेवाले इन दस देवों-इंद्रियोंको उत्पन्न किया और अपने इन पुत्रोंको शरीरमें योग्य स्थान दिया और वे बडे विशाल देव अपने अपने स्थानमें जाकर रहने लगे।

इसीका वर्णन पुरुष सूक्तमें भी है जैसा—

चन्द्रमा मनसो जातः चक्षोः सूर्यो अजायत।

ऋ० १०।९०

'मनसे चन्द्रमा हुआ और आंखसे सूर्य हुआ।' इसीको हम ऐसा भी कह सकते हैं–'चन्द्रमासे मन हुआ और सूर्यसे आंख बना।' यह उलटा और सुलटा दोनों ओरसे कहा जा सकता है। वैसे वर्णन सर्वत्र हैं भी।

अर्थात् जो वेदमंत्रोंमें है, वही उपनिषदोंमें है और वही श्रीमद्भागवतमें है। फरक इतना ही है कि वेद मंत्रोंकी अपेक्षासे उपनिषदोंमें अधिक देवताएं ली हैं और उससे भी अधिक देवताएं श्रीमद्भागवतमें हैं। पर तत्त्वदृष्ट्या वेदकी ही बात उपनिषदोंमें है और उपनिषदोंकी ही श्रीमद्भागवतमें है।

वास्तवमें देवताएं ३३ हैं, उन सब ३३ देवताओंका वर्णन न वेदमंत्रमें है, न उपनिषदोंमें है और ना ही श्रीमद्भागवतमें है। पांच, दस, पंदरह इतने ही देवोंका वर्णन किया है और इस संक्षिप्त वर्णनसे हमने ३३ देव अंशरूपसे शरीरमें वसते हैं ऐसा तर्कसे जानना चाहिये। यह

जाननेके लिये श्रीमद्भागवतका वर्णन सहायता करता है इसमें संदेह नहीं है।

ऊपरके भागवतके वचनमें 'पाद' के स्थान पर 'हरि, विष्णु' रखा है। इस विषयमें पाठकोंमें संदेह उत्पन्न हो सकता है, पर इसके लिये वेदमें वचन है—

ध्रुवा दिग् विष्णुरधिपतिः ॥ अथर्व ३।२७।५

'ध्रुवा दिशाका विष्णु अधिपति है।' यहां ध्रुवा दिशा पृथिवीकी दिशा है और उसका अधिपति विष्णु है। इसी वेद वचनको लेकर उक्त भागवतके श्लोकमें पृथिवी पांवके स्थानमें है और पांवका अर्थात् पृथ्वी स्थानका संबंध विष्णुसे बताया है। 'पद्भ्यां भूमिः' (ऋ. १०।९०); 'पद्भ्यां पृथिवी' (मुण्डक २।१।४); 'पृथिव्येव पादौ' (छां. उ. ५।१८।२) इस तरह विराट् पुरुषके पांवका संबंध पृथिवीके साथ बताया है। द्युलोक उसका सिर है, अन्तरिक्ष उदर है और पृथिवी पांव है। इतने वचनोंका विचार करके श्रीमद्भागवतकारने पांवोंका संबंध विष्णुसे बताया है। इतना विराट् पुरुषका वर्णन वेद, उपनिषद और भागवतमें समान ही है।

नव नवति

वेदमें 'नवतीर्नव' ऐसे प्रयोग हैं। देखिये ऋग्वेदमें—

अहं पुरो मन्दसानो व्यैरं नव साकं नवतीः शम्बरस्य ॥ ऋ० ४।२६।३

अवाहन् नवतीर्नव। ऋ० ९।६१।१

इन्द्रो दधीचो अस्थिभिर्वृत्राण्यप्रतिष्कुतः। जघान नवतीर्नव ॥ अथर्व २०।४१।१

"मैंने शंबरके निन्यानवे नगर एक साथ तोड दिये। 'इन्द्रने दधीचीके अस्थियोंसे बने वज्रसे निन्यानवे वृत्रोंको अर्थात् वृत्रके नगरोंको तोड दिया। अथवा निन्यानवे वृत्रों का वध किया।" इस प्रकार 'निन्यानवे' इस संख्याका उल्लेख वेदोंमें कई वार आ गया है। वही संख्या श्रीमद्भागवतमें वैसीही आगयी है—

नवतिं नव चाध्वनः। श्री. भागवत ३।३०।२४

'निन्यानवे मार्गोंके' विभाग नरकमें भोगता है। कष्ट भोगता है। यहां केवल संख्या का ही साम्य है।

वृत्रासुरका वध

वृत्रासुरकी कथा वेदमें है। इस कथाके मंत्र इस तरह वेदमें हैं—

घनो वृत्राणामभवः। ऋ० १।४।८

घनं वृत्राणां जनयन्त देवाः ॥ ऋ० ३।४९।१

श्रेष्ठो घने वृत्राणाम्। ऋ० ६।२८।८

घनो वृत्राणां तविषो बभूथ। ऋ० ८।९६।१८

हन्तो वृत्राणामसि। ऋ० ९।८८।४

वृत्रस्य अभिनत् शिरः ॥ ऋ० १।५२।१०

अस्मा इदु त्वष्टा तक्षद् वज्रं स्वपस्तमं स्वर्यं रणाय। वृत्रस्य चिद् विदद् येन मर्म तुजन्नीशानस्तुजता किये धाः ॥ ऋ० १।६१।६

इन्द्रो वृत्रस्य तविषीं निरहन्त्सहसा सहः। महत्तदस्य पौंस्यं वृत्रं जघन्वान् असृजत्। ऋ० १।८०।१०

इन्द्रो वृत्रस्य संजितो धनानाम्। ऋ० ५।४२।५

वि चिद् वृत्रस्य दोधतो वज्रेण शतपर्वणा। शिरो बिभेद वृष्णिना ॥ ऋ० ८।६।६

अयमिन्द्रो मरुत्सखा वि वृत्रस्याभिनच्छिरः। वज्रेण शतपर्वणा ॥ ऋ० ८।७६।२

नि षीं वृत्रस्य मर्मणि वज्रमिन्दो अपीपयत् ॥ ऋ० ८।१००।७

वृत्रस्य हनू रुज। ऋ० १०।१५२।३

ऐसे इन्द्रवृत्रके युद्धके सेकडों मंत्र हैं। इन मंत्रोंमें कहा है कि 'इन्द्रने वृत्रका वध किया। वृत्रके सब अनुयायियोंका नाश किया। वृत्रका सिर इन्द्रने काटा। त्वष्टा देवोंका शिल्पी था, उसने इन्द्रको सौ धारावाला वज्र बनाया, इस शतपर्ववाले वज्रसे वृत्रका सिर इन्द्रने काटा। वृत्रके सब मर्म काटे, वृत्रकी हनु काट दी। इस तरह वृत्रके टुकडे टुकडे करके उसका वध किया।' यह कथा वेदके मंत्रोंमें है जो ऊपरके मंत्रमें दीखती है। यही कथा ऐसी ही श्रीमद्भागवतमें विस्तारसे दी है देखिये—

महता रौद्रदंष्ट्रेण जृम्भमाणं मुहुर्मुहुः। वित्रस्ता दुद्रुवुर्लोका वीक्ष्य सर्वे दिशोदश ॥ १७ ॥

येनावृता इमे लोकास्तमसा त्वाष्ट्रमूर्तिना। स वै वृत्र इति प्रोक्तः पापः परमदारुणः ॥ १८ ॥

अथो ईश जहि त्वाष्ट्रं ग्रसन्तं भुवनत्रयम्। ग्रस्तानि येन नः कृष्ण तेजांस्यस्त्रायुधानि च ॥ ४४ ॥

मघवन् यात भद्रं वो दध्यञ्चं ऋषिसत्तमम्। विद्याव्रततपःसारं गात्रं याचत मा चिरं ॥ ५१ ॥

स वा अधिगतो दध्यङ्ङाश्विभ्यां ब्रह्म निष्कलम् ।
यद्वा अश्वशिरो नाम तयोरमरतां व्यधात् ॥ ५२ ॥
दध्यङ्ङाथर्वणस्त्वाष्ट्रे वर्माभेद्यं मदात्मकम् ।
विश्वरूपाय यत्प्रादात्त्वष्टा यत्त्वमधास्ततः ॥ ५३ ॥
युष्मभ्यं याचितोऽश्विभ्यां धर्मज्ञोऽङ्गानि दास्यति ।
ततस्तैरायुधश्रेष्ठो विश्वकर्मविनिर्मितः ॥ ५४ ॥
येन वृत्रशिरो हर्ता मत्तेज उपबृंहितः ॥ ५ ॥

श्री भागवत ६।९

स तु वृत्रस्य परिघं करं च करभोपमम् ।
चिच्छेद युगपद्देवो वज्रेण शतपर्वणा ॥ २५ ॥
छिन्नपक्षो यथा गोत्रः खाद्भ्रष्टो वज्रिणा हतः ॥२६॥

श्रीभागवत ६।१२

वृत्रे हते त्रयो लोका विना शक्रेण भूरिद ।
सपाला ह्यभवन् सद्यो विज्वरा निर्वृतेन्द्रियाः ॥१॥

श्री भागवत ६।१३

"त्वष्टाका पुत्र वृत्र था। इस वृत्रने सब लोक पराभूत किये। और सब लोकोंपर अन्धकार छा दिया। सब लोक भयभीत हुए और ईश्वरकी प्रार्थना करने लगे। 'हे ईश्वर! इस त्वष्टा पुत्र असुरका नाश कर, इसने सबके शस्त्र खाये हैं और सबको परास्त किया है।' ईश्वरने सब देवोंसे कहा कि 'हे देवो! तुम दधीची ऋषिके पास जाओ और उसकी हड्डियाँ मांगो। वह ऋषि बडा ज्ञानी है वह तुम्हें हड्डियां देगा। उन हड्डियोंसे विश्वकर्मा वज्र बना देगा और उस वज्रसे इन्द्र वृत्रका वध करेगा।' इस तरह वज्र सौ धाराओंसे युक्त विश्वकर्माने बनाया, और इस वज्रसे इन्द्रने उस वृत्रका नाश किया। उस वृत्रके हाथपांव तोडे गये और वह भूमिपर मर कर गिर गया। वृत्रका वध होनेके बाद तीनों लोक दुःख रहित हो गये।"

यह कथा जैसी वेद मंत्रोंमें है वैसी ही श्रीभागवतमें है। इस कथामें आये नामोंको वेदमंत्रोंमें अब देखिये—

दध्यङ्ङथर्वा ऋषि

यामथर्वा मनुष्पिता दध्यङ् धियमत्नत ।

ऋ० १।८०।१६

दध्यङ् ह यन्मध्वाथर्वणो वामश्वस्य शीर्ष्णा प्र यदीमुवाच ॥ ऋ० १।११६।१२

इन्द्रो दधीचो अस्थभिः वृत्राण्यप्रतिष्कुतः ।
जघान नवतीर्नव ॥ ऋ० १।८४।१३

आथर्वणायाश्विना दधीचेऽश्व्यं शिरः प्रत्यैरयतम् ॥
स वां मधु प्रवोचदृतायन् त्वाष्ट्रं यद् दस्रावपि कक्ष्यं वाम् ॥ ऋ० १।११७।२२

इस तरह अथर्वपुत्र दधीचीका वर्णन वेद मंत्रोंमें है। अश्वका सिर उसको लगाया और उसने अश्विदेवोंको मधुविद्या कही। दधीचीने अपनी हड्डियां दी, इन हड्डियोंका वज्र बनाया और उस वज्रके द्वारा इन्द्रने वृत्रासुरका वध किया।' यह कथा आलंकारिक तो है। क्योंकि ऋषिको घोडेका सिर लगाना, फिर उसने मधुविद्याका उपदेश देना आदि बातें आलंकारिक होनेमें संदेह ही नहीं है। जिस युक्तिसे वेदमंत्रोंका अलंकार खुलेगा, उसी युक्तिसे इन रोचक कथाओंका भी अलंकार खुल जायगा। यही यहां बताना है।

शंबरासुर

शंबरासुर भी वृत्रका साथी था। इस विषयमें वेदके मंत्र देखिये—

अदर्दर्मन्युना शंबराणि वि । ऋ० २।२४।२
दिवोदासं शंबरहत्ये आवत : ऋ० १।११२।१४
अधूनोत् काष्ठा अव शंबरं भेत् । ऋ० १।५९।६
यः शंबरं यो अहन् पिप्रुमव्रतम् । ऋ० १।१०१।२
यः शंवरं पर्वतेषु क्षियन्तं चत्वारिंश्यां शरद्यन्वविंदत्।
ओजायमानं यो अहिं जघान दानुं शयानं स जनास इन्द्रः ॥ ऋ० २।१२।११
अवाहन्निन्द्र शंबरम् । ऋ० ४।३०।१४
वृणक् पिप्रुं शम्बरं शुष्णमिन्द्रः । ऋ० ६।१८।८

ये मंत्र शंबरके हैं, पर इनमें पिप्रु, अहि, दानु, शुष्ण आदि वृत्रके साथियोंके नाम हैं। और यह शंबर पर्वतोंपर रहा था, ये शंबर अनेक थे, आदि वर्णन यहां स्पष्ट रीतिसे है। अब नमुचि देखिये।

नमुचि

निबर्हयो नमुचिं नाम मायिनम् ॥ ऋ० १।५३।७
यः पिप्रुं नमुचिं या रुधिक्रां । ऋ० २।१४।५
अहञ्च वृत्रं नमुचिमुताहन् । ऋ० ७।१९।५

इस तरह नमुचिका वर्णन वेदमंत्रोंमें है। इस नमुचिको यहां (मायी) कपटी कहा है, इसके साथी रुधिक्रा, वृत्र पिप्रु ये हैं। यह (मख-स्यु) यज्ञका नाश करता था, यह (दास) हीन था, नाश करने योग्य था। ऋषिको कपटजालसे मुक्त करनेके लिये इन्द्रने नमुचिका वध किया। यह सब ऐसा ही वर्णन श्रीमद्भागवतमें है। ये ही शब्द ऐसे ही वहां है।

इतिहास और पुराणोंमें वेदमंत्रोंकी संक्षिप्त वर्णनमय आलंकारिक कथाएं विस्तारसे और मनोरंजक ढंगसे लिखी हैं। इनको यह रूप इसलिये दिया गया कि इससे लोगोंका मनोरंजन हो और वेदमंत्रोंका आशय जनताको सुबोध रीतिसे समझे। इसलिये इतिहास और पुराण रचे हैं।

यह देखकर आज हमें यह उचित है कि हम यह सब देखें। एक एक विद्वान एक एक पुराण लेकर एक वर्षतक उसका अध्ययन करेगा, तो उसके सामने कथाएं आजांयगी और उनका वैदिक रूप भी उसके सन्मुख आ जायगा। दोनोंकी तुलनासे वेदमें कौनसी कथा कैसी है और पुराणोंमें वह कैसी बनायी गयी। यह रूपान्तर अच्छा हुआ या बुरा हुआ है। बुरा हुआ होगा तो उसमें कहांतक बुराई है यह सब देखना चाहिये। और निष्पक्ष होकर निर्णय करना चाहिये कि इस पुराण कथा संग्रहमें लेने योग्य अंश कितना है और छोडने योग्य कितना है।

वेदमंत्रोंका आशय समझानेके लिये इतिहास और पुराण लिखे हैं। इसलिये वेदमंत्रोंके साथ इतिहास और पुराणोंकी तुलना करनी चाहिये।

ऐसी तुलना करनेसे कमसे कम यह ज्ञान तो अवश्य होगा कि उस पुराण लेखकके समय इन वेदमंत्रोंका आशय किस तरह समझा जाता था। यदि इस तुलनासे वेदमंत्रोंका अर्थ करनेमें हमें सहायता हुई तो वह ले ली जाय। और न हुई तो वह भी इस कारण सहायता नहीं होती है। ऐसा सब विद्वानोंके सामने प्रकट हो जायगा।

संपूर्ण इतिहासों और पुराणोंका इस तरह तुलनात्मक अध्ययन होना चाहिये। यह एक वेदाध्ययनका पद्धति है अतः इसका उपयोग करना चाहिये।

इस लेखमें हमने श्रीमद्भागवतके साथ तुलना की है। यह भी संपूर्णतया नहीं है। दिग्दर्शन मात्र है। संपूर्णतया करनेसे इसके बीस गुणा लेख बढेगा। इसलिये दिग्दर्शन मात्र यहां किया है।

वेदमंत्रोंके सेंकडों टुकडे एक साथ जोडकर उस श्रृंखला की तुलना पौराणिक कथाके साथ करनी चाहिये। यह कार्य बडे परिश्रमकी तथा बडे धनराशीकी अपेक्षा करता है। आशा है वेदप्रेमी एक वार ये परिश्रम लेकर वेदके पौराणिक रूपान्तरका स्वरूप यथार्थ रूपसे जनताके सामने रखेंगे।

प्र श्न

१ पुराणोंकी रचना किस हेतुसे की थी ?

२ 'इतिहासों और पुराणों' से वेदका उपबृंहण करना चाहिये इसका भाव क्या है ?

३ अजन्माके जन्मोंका वर्णन सत्य है वा आलंकारिक ?

४ वेदशास्त्रवेत्ताकी नियुक्ति राज्यशासनके किन अधिकारोंके स्थानों-पर की जाती थी ? आज वैसा क्यों नहीं होता ?

५ वेदार्थ जाननेवालेकी योग्यता कितनी है ?

६ ईश्वरकी व्यापकता बतानेवाले वचन वेद और भागवतसे बताइये ।

७ विष्णुके वर्णनके वचन वेद और भागवतसे अर्थ सहित बताइये ।

८ दो सुपर्ण कहां रहते, वह वृक्ष कहां है ? इनका वर्णन कीजिये ।

९ प्रभुके भयसे कौन कार्य करते हैं ?

१० वृत्स और दूधके अलंकारसे कौनसा तत्त्वज्ञान दिया है सो बताइये ।

११ कालचक्रका वर्णन वेदमें और भागवतमें कैसा किया है ?

१२ शरीरको रथ मानकर वर्णन कीजिये, इससे कौनसा बोध मिलता है वह बताइये ।

१३ सहस्रों मस्तकोंवाला पुरुष कौन है उसके स्वरूपका वर्णन कीजिये ।

१४ अशरीरी परमेश्वरका शरीर कौनसा है, उसका वर्णन कीजिये और उसके शरीरके किस भागमें कौनसी देवताएं रहती हैं यह बताइये ।

१५ मानव शरीरमें कौनसी देवताएं कहां रहती हैं वह बताइये । किस तरह यह शरीर देवतामय है वह समझाइये ।

१६ दधीची ऋषिके कार्यका वर्णन कीजिये ।

१७ वृत्र, नमुची, शंबर आदि राक्षसोंके नाशका कार्य किसने किया था ?